AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

पंतजी के साहित्य में मार्क्सवाद के दर्शन

ORIGINAL ARTICLE

Author
सीतू शुक्ला
सहायक प्राध्यापक
राजनीति विज्ञान विभाग
स्वामी शुकदेवानंद कॉलेज
शाहजहाँपुर, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार

सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति मार्क्सवाद और साहित्य दोनों का आधार है, 'क्या होना चाहिए' के स्थान पर 'क्या है' इसकी खोज साहित्य करता है। मार्क्सवादी उसी साहित्य को श्रेष्ठ मानता है जो जीवन, समाज और मानवता के प्रति सच्चा और ईमानदार हो। कोई भी साहित्य वहां तक सत्य माना जाता है जिसकी उद्वेलिता की हुई भावनाएं और विचार व्यावहारिक अनुभव की कसौटी पर खरे उतरते हैं। हिंदी साहित्य का छायावाद– प्रगतिवाद मार्क्सवाद के इन्हीं सिद्धांतों का समर्थन करता है। जीवन को भौतिक दृष्टि से देखकर उसमें चेतना भरने का प्रयास मार्क्सवादियों की ओर से हुआ है। जीवन की सत्यता के रूप में वे सौंदर्य के साथ कुरूपता, नग्नता और वीभत्सता को भी ग्रहण करते हैं, यही कारण है कि साहित्य यथार्थ को अपने में समाहित करता है। सुमित्रानंदन पंत जी ने समाज के सबसे उपेक्षित वर्ग की विडंबना और उपहास को साहित्य के माध्यम से समाज के समक्ष लाने का अथक प्रयास किया। यह शोधपत्र पंतजी के साहित्य में मार्क्सवादी दर्शन का अध्ययन कर उसको यथार्थ से सम्बद्ध करने का प्रयास करता है।

मुख्य शब्द

समाज और साहित्य, मार्क्सवाद, चेतना, प्रगतिवाद, सामाजिक एवम राजनीतिक विकास.

समाज और साहित्य का अन्योन्याश्रित संबंध है। समाज व्यक्ति को और व्यक्ति समाज को प्रभावित करता है और यह दोनों मिलकर साहित्य की नींव डालते हैं। कोई भी वाद समाज रूपी समुद्र के मंथन से निकलता है। समाज की विसंगतियां एक नई विचारधारा एक नए स्वरूप का निर्माण करती हैं। बिल्कुल ठीक है यह जन समाज की प्रक्रिया लेकिन इसको संवरण कौन करें अथवा इस दस्तावेज को सुरक्षित कौन रखें? इसी का जवाब है– साहित्य। साहित्य के विचारक आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने कहा है कि ''मनुष्य की चित्तवृतियों का प्रतिबिंब ही साहित्य है।'' इसी परिपेक्ष्य में साहित्य में समाज की सहभागिता सहज ही देखने को मिलती है। साहित्यिक संरचना के प्रसिद्ध कवि सुमित्रानंदन पंत के साहित्य में मार्क्सवाद के दर्शन होते है।

मार्क्सवाद सर्वहारा वर्ग के शोषण को समाप्त कर एक ऐसे वर्गहीन समाज की स्थापना करना चाहता है। जिसमे समाज के किसी भी व्यक्ति को किसी भी सुविधा से वंचित नहीं किया जा सके। मार्क्स के अनुसार समाज का उत्कर्ष उसको आर्थिक व्यवस्था पर निर्भर करता है। समान आर्थिक वितरण एवं आर्थिक उन्नति से ही समाज

की उन्नति होती है। सामाजिक विषमता का प्रमुख कारण ही अर्थ का आसमान विभाजन ही है, परन्तु जब कोई नवीन प्रगतिशील विचारधारा आती है तो उस पर प्रारम्भ में कुछ ऐसी विचारधाराओं का प्रभाव भी पड़ने लगता है, जो ऊपर से देखने पर तो प्रगतिशील प्रतीत होती है, परन्तु जिनका प्रभाव घातक होता है। मार्क्सवाद समानता का प्रबल समर्थक है, साथ ही वह आध्यात्मिक भावना के स्थान पर भौतिक भावनाओं को प्रधानता देता है। मार्क्सवादी उसी साहित्य को अच्छा मानता है जो जीवन और समाज के प्रति सच्चा और ईमानदार है। कोई साहित्यिक कृति वही सत्य है जहां तक उसकी उद्वेलिता की हुई भावनाऐं और विचार व्यवहारिक अनुभव की कसौटी पर खरे उतरते है। हिन्दी का छायावाद, प्रगतिवाद मार्क्सवाद के इन्हीं सिद्धांतो का समर्थन करता है।

पंत जी मार्क्सवाद से प्रेरित होकर राष्ट्रवाद भुला देना चाहते है। सभी मनुष्य समान है, इसलिए देश, प्रान्त और राष्ट्र की सीमाओं को तोड़ना होगा, यही नहीं धर्म नीति और सदाचार का मूल्यांकन है 'जनहित'। इस जनहित अर्थात् विश्व मानवता के हित में अवरुद्ध हृदय के द्वारों को खोलना होगा। रूढ़िपाश में बंदी मनुजता पशु चीत्कार कर रही है। तड़ित प्रहार कर सीमा द्वारों को खोल दे। मार्क्सवाद वह जीवन दर्शन है, जो विश्वभर के श्रमिक किसानों, शोषित, दलितों के मुक्तिद्वार खोलता है। पंत जी युगवाणी में कहते है किः

''साम्यवाद ने दिया जगत को सामूहिक जनतंत्र महान
भव जीवन के दुःख दैन्य से, किया मनुजता का परित्राण।।''

व्यवहारता समाज रूढ़ि रीति से ग्रस्त हो गया, वर्ग और वर्णभेद बढ़ा साथ ही शोषण दमन की भावना भी बढ़ी। पूँजीपति, धनी, जमींदार, अधिकारी आदि अक्रर्मण्य हो गए और कर्मशील श्रमिको कृषकों का शोषण दमन करने लगे। ऐसे में पंत जी को लगा कि साम्यवाद ही सर्वोत्तम है। इसी से पूँजीवाद साम्राज्यवाद का ध्वंस होगा। पंत जी ने लिखाः

''साम्यवाद के साथ स्वर्ण युग करता मधुर पदार्पण।
मुक्ति निखिल मानवता करती, मानव का अभिवादन।।''

मार्क्सवादी विचारधारा वर्गहीन समाज की संरचना में विश्वास करती है, जिसके लिए वर्ग संघर्ष आवश्यक है। यह वर्ग संघर्ष आर्थिक ही नहीं बल्कि राजनीतिक स्तर पर भी होना चाहिए। वस्तुतः आर्थिक स्तर पर संघर्ष आज भी होते है और सदा होते रहेंगे। पंत जी सुधार में नहीं क्रान्ति में विश्वास करते है। इसका कारण यह है कि वर्तमान समाज इस सीमा तक विगड़ चुका है कि सुधार का प्रयास आत्म वंचना मात्र होगी। वे स्वयं कहते है' ''क्रान्ति वह अन्धकार है जो प्रकाश देता है, वह विष है जो अमृत बरसाता है, वह मरण है जो अमर चेतना देता है, वह भय है जो भीति हरता है, वह शुल्क है जो अतुल ऐश्वर्य देता है, वह अरूप है जो सुन्दरता बरसाता है, वह विनाश है जो सृजन हेतु है।''

पंत जी ने मार्क्स दर्शन का आश्रय यही समझकर लिया था कि वह एक नवीन युग सापेक्ष संस्कृति का निर्माण कर सकेगा, और वे पर्याप्त समय तक मार्क्स दर्शन को साहित्यिक मान्यता प्रदान करते रहे। मार्क्स दर्शन में विश्वास रखने वालो का विचार है कि आर्थिक वैषम्य (विषम होने का भाव) को मिटाकर एक वर्गहीन समाज की स्थापना कर एक नई सभ्यता और नवीन संस्कृति को जन्म दिया जा सकता है।

पंत जी की दृष्टि से नरेश, सामंत, पूँजीपति, धनिक आदि शोषक है। आर्थिक दृष्टि से यह सभी पूँजीपति वर्ग के है। अतः समाज के प्रति अपराधी है। इन्होंने समाज के एक बड़े वर्ग का शोषण किया है और उसे गरीबी, भुखमरी, अशिक्षा, अज्ञानता और रूढ़ियों के कर्दम (कीचड़) में ढकेल दिया है। पूँजीवादी व्यवस्था के सम्बंध में आचार्य नरेंद्र देव जी का विचार है कि ''उत्पादन, विनिमय और वितरण के साधनों यानी जमीन, मिलों, कारखानों, बैंकों आदि पर चंद पूँजीपतियों का अधिकार हो जाता है और समाज का बहुसंख्यक वर्ग मजदूर बन जाता है।'' मजदूर वर्ग उत्पादन के साधनों से वंचित रहने के कारण उत्पादन के साधन मालिकों अर्थात् पूँजीपतियों के हाथ अपनी श्रमशक्ति बेचकर और बदले में मजदूरी प्राप्त कर अपना निर्वाह करता है। गुलामी प्रथा के युग में जो स्थान मालिकों का था और सामांतशाही प्रणाली में जो स्थान सामंतो का वही स्थान वर्तमान आर्थिक प्रणाली में पूँजीपतियों का हो गया है। इसी

प्रकार गुलामों और कृषक दासों का स्थान मजदूर वर्ग लेता है। पंत जी ने पूँजीपति, अधिनायकवादी, धनपति, आदि शोषक जनों का चित्रण इस प्रकार किया हैः

''मंच पर उतरा पूँजीवाद,
विजित कर बहु निरीह भू–भाग।
लोक श्रम का शोषण कर रक्त,
लूट जन भू का स्वर्ण सुहाग।
साथ आया अधिनायकवाद,
विश्व युद्धों की भड़की आग।।

(लोकायतन, पृष्ठ संख्या 375)

ग्रामो में मानव का जीवन पशु से भी गया गुजरा है। मार्क्सवादी विचारधारा के अनुसार गाँवों में महाजनों व जमींदारों को शोषण माना गया है। गाँवों में ब्राह्मण, ठाकुर, लाला, कहार, किसान, जमींदार, अविद्या, अंधविश्वास, रूढ़ियों परंपराओं आदि से त्रस्त है। उनमें सर्वाधिक त्रस्त है वह किसान जो अन्नदाता है और गांव व नगर दोनों का पेट भरता है। भारत में खेती की अवस्था वैसे भी ठीक नहीं रही है, खेतो का छोटा होना, प्राकृतिक प्रकोप, कर की अधिकता आदि से किसान सदैव शोषित होता आया है। विवाह, बीमारी आदि के लिए लिया जाने वाला ऋण तो उसे सदैव के लिए महाजन की मुठ्ठी में पिसने को विवश कर देता है।

शोषित कृषक अपने को स्वामी समझता है, अगर उसके पास अपनी भूमि को प्राणाधिक प्रिय मानता है। समाज में उसकी मान मर्यादा भूमि से ही आंकी जाती है। ऐसे में कितना दुःखदायी होता होगा वह दृश्य जब वह पूँजीवादी व्यवस्था के फलस्वरूप बेदखल किया जाता होगा जिसका वर्णन पंत जी ने अपनी कविता में किया हैः

वह स्वाधीन किसान रहा, अभिमान भरा आंखों में इसका।
छोड़ उसे मझधार आज संसार, कगार सदृश्य वह खिसका।।
लहराते वे खेत दृगो में, हुआ बे–दखल वह अब जिनसे।
हंसती थी उसके जीवन की, हरियाली जिनके तृण–तृण से।।

(ग्राम्या, वे आंखें, पृ. सं. 25)

निष्कर्ष

मार्क्सवाद एक ऐसे समाज की परिकल्पना करता है, जहां किसी भी प्रकार का वर्ग भेद, शोषण व शासन नहीं होगा। इस राज्यविहीन समाज में सभी मनुष्य समान होंगे और क्षमतानुसार कार्य करके अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करेंगे। निःसंदेह समानता का आधार आर्थिक, सामाजिक व सांस्कृतिक आदि वाह्य सम्बंध होंगे। वह देश जाति के बंधन तोड़कर धरती पर समता और मानवता की स्थापना करना चाहता है। पंत जी का भी लक्ष्य मानव मात्र का उद्धार कर मानवता की स्थापना करना है।

मनुष्य की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मार्क्सवाद ही सही रास्ता दिखा सकता है। पंत जी कहते है कि 'आज भी जब नव मानववाद की दृष्टि से मैं विश्व जीवन ब्राह्य पक्ष की समस्याओं पर विचार करता हूं तो मार्क्सवादी की उपयोगिता मुझे स्वयं सिद्ध प्रतीत होती है।'

सन्दर्भ सूची

1. मेरा बचपन – आकाशवाणी, वार्ता, 12/11/1949।
2. शर्मा राजनाथ, (1967) *सुमित्रानंदन पंतः एक आलोचनात्मक अध्ययन,* श्री विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत, पृ. संख्या 127–129।
3. गुप्ता सुरेश चंद्र, (2015) *पंत जी की दार्शनिक चेतना,* प्रभात प्रकाशन, दिल्ली, पृ. संख्या. 219–221।

4. गुप्ता सुरेश चंद्र, (2006) *कविवर सुमित्रा नंदन पंत,* उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान, लखनऊ, प्रथम संस्करण, पृ. संख्या. 127।

5. देव नरेन्द्र, (2017) *राष्ट्रीयता और समाजवाद,* पेपर बैक पब्लिकेशन, नेशनल बुक ट्रस्ट इण्डिया, शिक्षा मंत्रालय, पंचम संस्करण, पृ. संख्या. 424।

6. पालीवाल कृष्ण दत्त, (2020) *सुमित्रानंदन पंत भारतीय साहित्य के निर्माता,* साहित्य सरोवर पब्लिकेशन, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत, पृ. संख्या 30–32।

7. सिंह कमलेश कुमार, (2008) *राजनीतिक विचारधाराएं,* राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. संख्या 423।

——==00==——